Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. V, Issue IX, January-2013, ISSN 2230-7540

REVIEW ARTICLE

अलबीरूनी और उसके 'तहकीक–ए–हिन्द' की लेखन पद्धति

www.ignited.in

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. V, Issue IX, January-2013, ISSN 2230-7540

अलबीरूनी और उसके 'तहकीक–ए–हिन्द' की लेखन पद्धति

Renu Sharma

Research Scholar, CMJ University, Shillong, Meghalaya, India

----------X----------

अबू रैहाँ मुहम्मद इब्न अहमद अलबीरूनी का जन्म मध्य एशिया स्थित उजबेकिस्तान के ईरानी ख्वारिज्म (खीब) निवासी एक परिवार में सितम्बर 970 ई. (360 हिजरी) को हुआ था। जबकि कुछ विद्वानों के अनुसार उसका जन्म 973 ई. में हुआ। ख्वारिज्म आधुनिक सोवियत संघ में आक्सस या जैहून नदी के निकट स्थित है। उसका जन्मस्थान ख्वारिज्म के बाहर था, अतः उसे 'अलबीरूनी' कहा गया। जिसका अर्थ था 'बाहर का' अथवा 'विदेशी'। फारसी में 'बीरून' शब्द का अर्थ बाहर अथवा विदेश होता है। 1166 ई. में समानी कृत 'किताब–अल–अन्सब' के अनुसार 'बीरूनी' शब्द उन सब ख्वारिज्म परिवार के लोगों के लिए प्रयुक्त होता था, जो ख्वारिज्म के बाहर पैदा होते थे। अतः इसी कारण अबू रैहाँ का नाम 'अलबीरूनी' पड़ा।

1017 ई. में वह महमूद गजनवी के दरबार की शोभा बना और 1030 ई. में महमूद की मृत्यु पर्यन्त वह उसकी सेवा में रहा। ऐसा माना जाता है कि इसी मध्य उसने भारत भ्रमण किया। उसकी इस भारत प्रवास की अवधि कितनी थी, इस विषय पर विद्वानों में मतभेद है। तत्पश्चात् उसने अपनी विख्यात कृति **'तहकीक–ए–हिन्द'** की रचना की जो कि पूर्वमध्ययुगीन भारतीय इतिहास का प्रमुख स्त्रोत ग्रंथ है।

किसी भी देश की संस्कृति के विस्तृत स्वरूप को जानने के अनेक स्त्रोत होते हैं। इनमें देश में प्राप्त मूल ग्रन्थ, स्वयं का पर्यवेक्षण, संवाददाताओं की सूचनाएँ आदि ज्ञान–प्राप्ति के स्त्रोत प्रमुख होते है। अलबीरूनी ने भी तत्कालीन भारतीय संस्कृति को समझने के लिए इन समस्त स्त्रोतों को माध्यम बनाया। सम्भवतः अलबीरूनी ही वह पहला विदेशी लेखक है, जिसने इन समस्त साक्ष्यों का उपयोग तहकीक–ए–हिन्द के लेखन में किया। अलबीरूनी से पूर्व प्राचीन एवं मध्यकालीन तथा परवर्ती विदेशी लेखकों ने भारत विषयक ग्रंथों के लेखन में इतने सुनियोजित रूप से अपने विवरण प्रस्तुत नहीं किए।

संवाददाताओं की सूचनाएँ

अलबीरूनी ने अपने ग्रन्थ 'तहकीक–ए– हिन्द' के अनेक विवरणों के लेखन में संवाददाताओं की सूचनाओं का सहारा लिया है, यद्यपि वह इन सूचनाओं के प्रति सदैव सावधान रहता था क्योंकि यह जानना अत्यन्त कठिन था कि ये सूचनाएं किस सीमा तक और कितनी सत्य थी। ये संवाददाता पूर्वाग्रह और असन्तोष के कारण अनेक असत्य सूचनाएँ देने से नहीं चूकते थे। वह लिखता है 'संवाददाताओं पर विशेषकर विभिन्न देशों के पक्षपात, पारस्परिक विरोध तथा द्वेष का प्रभाव पड़ता है। हमें संवाददाताओं के विभिन्न वर्गों में अन्तर अवश्य रखना चाहिए।' एक बार कन्नौज के कुछ मदारी संवाददाताओं ने उसे असत्य बातें बताई। जब उसने बाद में उन सूचनाओं पर विचार किया तब उसने उन सूचनाओं को असत्य पाया। वह लिखता है ''जब मैंने संवत्सरों के इन काल्पनिक नामों में देशों, वृक्षों और पर्वतों के नाम सुने तो मुझे अपने संवाददाताओं पर सन्देह हुआ, विशेष रूप से उनके प्रधान कर्म जंत्र–मंत्र और जादू (मदारी सदृश) थे। रंगी हुई दाढ़ी अपने धारण करने वाले को झूठा साबित करती है। एक ही प्रश्न को अलग–अलग समयों, क्रमों और सन्दर्भों में दुहराते हुए, मैंने सर्वदा ध्यान से एक–एक की परीक्षा की, परन्तु देखिए मैंने कैसे भिन्न–भिन्न उत्तर पाये।'

तत्कालीन भारत में कुछ ऐसे संवाददाता भी थे जो जातिगत स्वार्थ और परिवारगत द्वेष के कारण असत्य सूचना देते थे। अलबीरूनी लिखता है: ''कुछ संवाददाता जाति–विशेष के होने के कारण स्वार्थसिद्धि के लिए परिवार और देश की प्रशंसा करके अथवा अपने विरोधी परिवार और देश पर आक्षेप करके असत्य बोलते हैं, क्योंकि वे सोचते हैं कि ऐसा करने से उनका अभीष्ट सिद्ध हो सकता है। दोनों स्थितियों में लोभ और द्वेष जैसे दुर्गुण ही उन्हें ऐसा करने के लिए उत्प्रेरित करते हैं।'

इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे संवदाददाता भी थे जो प्रकृति वश झूठ बोलते थे। अतः अलबीरूनी के अनुसार वही व्यक्ति प्रशंसनीय था जो सत्य का अनुसरण करता है। अलबीरूनी ने विशेष रूप से इन संवाददाताओं का उल्लेख इस कारण से किया क्योंकि वह यह बताना चाहता था कि उसने जो विवरण लिपिबद्ध किया है उसके गलत और सही के लिए उत्तरदायी वे संवाददाता है, न कि वह स्वयं। इस प्रकार अपनी कृति में अलबीरूनी ने संवाददाताओं के माध्यम से अनेकानेक भारतीय विषयों की सूचना दी है।

मूल ग्रन्थों का अध्ययन

अलबीरूनी वह प्रथम मुस्लिम लेखक था जिसने पुराणों और विभिन्न हिन्दू धर्मशास्त्रों से लेखन सामग्री प्राप्त की। वह विद्या के इन क्षेत्रों में निपुण होने के कारण अपने पूर्ववर्ती और परवर्ती मुसलमान लेखकों की तुलना में सर्वश्रेष्ठ था। ज्योतिष, गणित, भूगोल और तत्वदर्शन सम्बन्धी उसका ज्ञान अत्यन्त गहन और विवेकशील था। उसने भारत के अनेक मूल–ग्रन्थों का अध्ययन किया था तथा अपने ग्रंथ के लेखन में उनकी सहायता ली थी। इन मूल ग्रन्थों में ज्योतिष, भूगोल, धर्म, दर्शन, औषधि, रसायन आदि से सम्बन्धित ग्रन्थ प्रमुख थे। उसने तहकीक–ए–हिन्द में कुछ ऐसे भारतीय मूल ग्रन्थों की सूची दी है, जिन्हें उसने स्वयं देखा नहीं था। अतः उसने उनका केवल नाम के साथ साधारण परिचय दिया है, जैसे चारों वेद। उसने अठारह पुराणों का भी उल्लेख किया है– आदिपुराण, मत्स्यपुराण, कूर्मपुराण, वराहपुराण, नरसिंहपुराण, वामनपुराण, वायुपुराण, नन्दपुराण, स्कन्दपुराण, आदित्यपुराण, सोमपुराण, साम्बपुराण, ब्रह्माण्डपुराण,

www.ignited.in

मार्कण्डेयपुराण, तार्क्ष्यपुराण, विष्णुपुराण, ब्रह्मपुराण और भविष्यपुराण।

उसने इन सभी पुराणों का स्वयं अध्ययन नहीं किया था। वह स्वयं लिखता है: ''इस सम्पूर्ण साहित्य में से मैंने केवल मत्स्य, आदित्य और वायुपुराण के अंशों को देखा है।'' उसके इस कथन से यह भी स्पष्ट होता है कि उसने जिन पुराणों को देखा, उनके सम्पूर्ण भाग को नहीं, बल्कि उनके अंशों को ही देखा। विष्णुपुराण उसने स्वयं नहीं पढ़ा था, बल्कि किसी से पढ़वाया था। वह कहता है: ''पुराणों की इससे कुछ भिन्न सूची 'विष्णुपुराण' से पढ़कर सुनाई गयी हैं।''

तहकीक–ए–हिन्द में उसने बीस स्मृतियों की सूची दी है, जो इस प्रकार है– आपस्तम्ब, पराशर, शतपथ, सामवर्त्त, दक्ष, वसिष्ठ, अंगिरस, यम, विष्णु, मनु, याज्ञवल्क्य, अत्रि, हारीत, लिखित, शंख, गौतम, बृहस्पति, कात्यायन, व्यास और उशनस। इन स्मृतियों में से उसने कौन–कौन सी देखी थी, कौन–कौन सी नहीं, इस सम्बन्ध में उसने कुछ भी नहीं लिखा है। सम्भवतः, मनुस्मृति के कुछ अंश उसने अवश्य देखे थे। इनके अतिरिक्त उसने कुछ अन्य ग्रन्थों का भी उल्लेख किया है जैसे 'गौड़ का ग्रन्थ', 'कपिलकृत सांख्य, पतं जलि, 'कपिलकृत न्यायभाषा', जैमिनीकृत मीमांसा,' वृहस्पतिकृत लोकायत', और 'विष्णुधर्म'।

जहाँ उसने विभिन्न पर्वों के साथ महाभारत का उल्लेख किया है, वहीं दूसरी ओर गीता और रामायण का भी वर्णन किया है। भारतीय व्याकरण और छन्द सम्बन्धी पुस्तकों का विवरण देते हुए वह लिखता है: ''इस विज्ञान के ग्रन्थों के जो नाम मुझे बतलाये गये हैं वह निम्नलिखित है– ऐन्द्र, चान्द्र, शाकट, पाणिनी, कातंत्र, शशिदेववृत्ति और शिष्यहितावृत्ति। ऐसा प्रतीत होता है कि उसे इन ग्रन्थों के केवल नाम ही बताये गये थे जिसका उसने उल्लेख ' तहकीक–ए–हिन्द' में किया है।

अलबीरूनी ने पुलिस, ब्रह्मगुप्त, वराहमिहिर, आर्यभट्ट, बलभद्र, पाणिनी आदि भारतीय लेखकों के अनेक उद्धरण अपनी कृति में दिये हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि उसने इन भारतीय ग्रन्थों का भी अध्ययन किया था।

अनुवादित ग्रन्थों का अध्ययन

उसकी कृति से प्रकट होता है कि आरम्भ में, जब अलबीरूनी संस्कृत नहीं जानता था तब उसने अरबी में अनुवादित भारतीय ग्रन्थों का अध्ययन किया था। अरब में अलबीरूनी से कई शती पूर्व भारतीय ग्रन्थों का अनुवाद–कार्य प्रारम्भ हो चुका था। इसमें ज्योतिष, फल गणित, चिकित्सा आदि विषयक ग्रन्थ प्रमुख थे। वराहमिहिर द्वारा लिखित 'वृहत्संहिता' अरब में 'अससिन्द हिन्द' नाम से प्रचारित थी। इसी प्रकार आर्यभट्ट का ग्रंथ 'अरजबन्द' नाम से प्रसिद्ध था। अलबीरूनी को भारतीय ज्योतिष और गणित विषयक परिचय अलफजारी (771 ई.) और याकूब (779 ई.) के अनुवादों से मिला था। अलबीरूनी लिखता है ''यह स्पष्ट है कि अलफजारी और याकूब ने कभी अपने हिन्दू गुरू से इस विषय की बात सुनी थी कि ग्रहों के चक्करों की गणना वृहत्संहिता की है।

अलबीरूनी ने अरबी में अनुवादित चरक संहिता का भी अध्ययन किया था। वह लिखता है ''चरक के ग्रंथ में निम्नलिखित बातों का वर्णन है। मैं उन्हें यहाँ अरबी अनुवाद के माध्यम से लिखता हूँ, क्योंकि मैंने उनको हिन्दुओं के मुँह से नहीं सुना।''

अलबीरूनी का निजी पर्यवेक्षण

प्रत्येक लेखक अपने लेखन में यद्यपि घटना की सत्यता, एवं स्पष्टता को लेखन का आधार बनाने का प्रयास अवश्य करता है किन्तु फिर भी कई बार उसके पूर्वाग्रहों से प्रभावित होने की सम्भावना भी रहती है। अलबीरूनी के पर्यवेक्षण की दृष्टि भी इन पूर्वाग्रहों से प्रेरित थी, किन्तु उसमें तर्क और विवेक इस सीमा तक था कि कई बार उसने अपने समाज की आलोचना करने से भी संकोच नहीं किया है।

हिन्दुओं के कुछ विश्वासों, विभिन्न विषयगत मतों और आचारों के सम्बन्ध में जिनका अध्ययन उसने विभिन्न हिन्दुओं के सम्पर्कों और भारत–आवासकाल में किया था, अलबीरूनी का अपना पर्यवेक्षण था। उसके अध्ययन में, जहाँ उसकी तटस्थता, स्पष्टता, विवेचना और सत्यता का आभास मिलता है वहीं उसके संस्कारगत पूर्वाग्रहों का भी ज्ञान होता है जो उसके वर्गगत स्वभाव को ही नहीं बल्कि वंशगत आचार को भी दर्शाता है। वह लिखता है ''हिन्दू विश्वास करते हैं कि उनके देश के समान कोई देश नहीं, उनकी जाति के समान कोई जाति नहीं, उनके राजाओं के समान कोई राजा नहीं, उनके धर्म के समान कोई धर्म नहीं और उनकी विद्या के समान कोई विद्या नहीं है। वे घमण्डी, मिथ्याभिमानी, आत्मदर्पी और बुद्धिहीन है।''

किन्तु किसी भी देश के लोगों का यह सोचना और विश्वास करना स्वाभाविक है कि उनके देश और जाति के समान विश्व का कोई अन्य देश और जाति नहीं है। यह सोच राष्ट्रीयता की द्योतक है। इस भावना से भरे किसी नागरिक को घमण्डी, मिथ्याभिमानी, आत्मदर्पी और बुद्धिहीन कहना भी पूर्णतः ठीक नहीं है। वर्तमान युग में भी, प्रत्येक देश का निवासी अपने देश, समाज और राष्ट्र को अन्य देशों की तुलना में अधिक महत्त्व देता है। अतः अलबीरूनी कालीन लोग यदि ऐसा विश्वास करते थे तो वह उनकी राष्ट्रीय भावना थी, न कि उनका 'मिथ्याभिमान', 'आत्मदर्प और 'बुद्धिहीनता'। किसी सम्राट की महानता, किसी धर्म की श्रेष्ठता अथवा किसी जाति की व्यापकता, परम्परा से चली आ रही उस संस्कृति की देन होती है, जिसकी आधारशिला सरलता, सत्यता और सहानुभूति होती है। इस दृष्टि से भारत का इतिहास अत्यन्त गौरवशाली रहा है। यदि भारतीयों का यह दोष मान भी लिया जाए तो अलबीरूनी का यह कथन भी तो मिथ्याभिमान ही प्रतीत होता है कि ''मैं अपने आपको उनसे बहुत श्रेष्ठ समझता था और उनके समान कहलाने में अपना अपमान मानता था।''

अलबीरूनी लिखता है ''भारतीय विदेशियों को 'म्लेच्छ' अर्थात् अस्पृश्य कहकर पुकारते हैं। वे उनके साथ खाने, पीने, रहने, विवाह आदि किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रखते, क्योंकि उनका यह विचार है कि ऐसा करने से वे भ्रष्ट हो जाएगें।''

वास्तव में, जब हिन्दुओं के चार्तुवर्णों में ही ऐसा भेदभाव था तब विदेशियों के साथ ऐसा भेदभाव रखना कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। हिन्दू और मुस्लिम दोनों समाजों में आचार, धर्म, सामाजिक नियमों और विचारों की भिन्नता थी। दोनों समाजों के मूल्य भिन्न थे अतः ऐसा होना स्वाभाविक था। किन्तु दूसरी ओर कुछ ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं, जिससे स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज में 'म्लेच्छो' को हीन न मानकर उन्हें विभिन्न प्रकार के कार्य सौंपे जाते थे। कश्मीर नरेश कलश ने तुर्की शिल्पकार को कालेश्वर मन्दिर के ऊपर स्वर्णछत्र निर्मित करने के लिए नियुक्त किया था। इसी प्रकार कश्मीर के एक अन्य शासक हर्ष ने तुर्क मुसलमानों को अपनी सेना में नियुक्त

किया था। जिस गुजरात को सुल्तान महमूद ने अपने आक्रमणों से तहस–नहस कर दिया था, उसी गुजरात के ऐसे उदाहरण हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि वहाँ 'म्लेच्छों' से किसी प्रकार की घृणा नहीं की जाती थी। महमूद द्वारा सोमनाथ मन्दिर तोड़े जाने के बाद 1053 ई. में अहमदाबाद की जनता ने मुसलमानों को मस्जिद बनाने का अनुग्रह प्रदान किया था। एक अन्य उदाहरण खम्भात का भी है, जहाँ मस्जिद जला दिये जाने और अस्सी मुसलमानों को मार डालने पर जयसिंह सिद्धराज ने दोषियों को दण्डित किया था। गुजरात के व्यापारियों ने भी मुसलमानों को मस्जिद निर्माण में आर्थिक सहायता दी थी।

भारतीयों के स्वभाव का उल्लेख करते हुए अलबीरूनी लिखता है कि 'वे प्रकृति से ऐसे हैं, जो कुछ उन्हें आता है, दूसरों को नही बताते, अपनी जाति में और दूसरी जाति के लोगों से छिपाते हैं तथा विदेशियों से तो और भी। किन्तु एक अन्य स्थान पर वह यह भी स्वीकार करता है कि वह जिन ग्रन्थों को नहीं समझ पाता था, उन्हें सुदूरवर्ती भारतीय विद्वानों के पास जाकर पढ़ता और समझता था, जो इस बात का स्पष्ट द्योतक है कि अलबीरूनी जैसे विदेशी व्यक्ति को भारतीयों ने ज्ञान–विज्ञान की शिक्षा देने में तनिक भी संकोच नहीं किया। अतः भारतीयों के स्वभाव सम्बन्धी अलबीरूनी का उल्लेख भी पूर्वाग्रह से ग्रसित है। यदि भारतीयों का ऐसा आचरण रहा भी होगा तो उसका कारण कई शताब्दियों से जारी तुर्क आक्रमण भी रहे होगें जिनके कारण तत्कालीन भारतीयों के हृदय में उनके प्रति घृणा और असन्तोष व्याप्त था। इसी कारण स्वभावतः कुछ भारतीय अपने ज्ञान–विज्ञान का विदेशी मुसलमानों से आदान प्रदान करने से संकोच करते होंगे। भारतीयों के इस स्वभाव पर अपनी प्रतिक्रिया देते हुए अलबीरूनी लिखता है ''अगर वे यात्रा करें और दूसरी जातियों से मिले तो उनके विचार शीघ्र ही बदल जायें, क्योंकि उनके पूर्वज ऐसे संकीर्ण मस्तिष्क के नहीं थे, जैसी उनकी वर्तमान पीढ़ी है।''

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि तत्कालीन भारतीय समाज में ये दोष कुछ सीमा तक अवश्य रहे होगें, क्योंकि मध्य काल तक आते–आते विदेशों के साथ भारत के सम्बन्ध अवरूद्ध हो गए थे। क्योंकि भारतीय धर्म ग्रंथों विशेषकर पुराणों ने समुद्र–यात्राएं वर्जित कर दी थी। तथापि अलबीरूनी का कथन अत्यन्त कठोर और अतिर ि जत प्रतीत होता हैं।

भारतीय लेखकों द्वारा राजाओं के कालक्रम और उनके समय का सही उल्लेख न करने पर वह कहता है ''अभाग्यवश हिन्दू ऐतिहासिक क्रम पर बहुत कम ध्यान देते हैं। राजाओं के कालक्रम और उनके उत्तराधिकारियों के सम्बन्ध में वे बहुत असावधान है। जब उन्हें जानकारी देने के लिए बाध्य किया जाता है और वे न जानने के कारण नहीं बता पाते, तब वे सदा कथा सुनाने लग जाते है।'' फिर भी वास्तविकता यही है कि सुस्पष्ट विचार–पद्धति और आलोचनात्मक दृष्टिकोण होते हुए भी अलबीरूनी में ऐसे पूर्वाग्रह थे, जिनके कारण वह सामान्य धरातल से ऊपर नहीं उठ सकता था। इसका प्रमुख कारण उसके अपने संस्कार थे, जो उसे अपने पूर्वजों से मिले थे।

विभिन्न विषय और साहित्यगत पर्यवेक्षण

अलबीरूनी ने भारतीय विषयों और साहित्य का विशद् अध्ययन करने के पश्चात् उनके विषय में अपना मत प्रस्तुत किया है। वह लिखता है ''हिन्दुओं में ऐसे लोगों की कमी थी, जिनमें विद्याओं को उच्च स्थान पर पहुँचाने की योग्यता और उसके लिए अनुराग हो। इसीलिए प्रायः आप पाते हैं कि उनके कहे हुए वैज्ञानिक सिद्धान्तों में भ्रम है और न ही उनमें कोई युक्तिपूर्ण क्रम हैं। वे साधारण लोगों के बुद्धिहीन विचारों के साथ खिचड़ी बने हुए है। जैसे, अमित संख्याएँ, समय की अत्यन्त लम्बी अवधि और सारे धार्मिक मत, जिन पर गंवारों का अन्धाधुन्ध विश्वास है।''

हिन्दुओं की नक्षत्र–विद्या सम्बन्धी ज्ञान के विषय में अलबीरूनी लिखता है '' उन लोगों में नक्षत्र–विज्ञान बहुत प्रसिद्ध है, क्योंकि इससे उनके अनेक धार्मिक कार्यों का सम्बन्ध है। यदि मनुष्य ज्योतिषी कहलाना चाहता है तो उसे न केवल विज्ञान अथवा गणित ज्योतिष जानना चाहिए, बल्कि फलित ज्योतिष भी''। आज भी हिन्दुओं के अधिकांश धार्मिक कार्य नक्षत्रों की गणना पर ही निर्भर हैं। नक्षत्रों के विषय में हिन्दुओं के ज्ञान का परीक्षण करते हुए अलबीरूनी लिखता है ''नक्षत्रों के सम्बन्ध में हिन्दुओं का ज्ञान भ्रम से रहित नहीं। उनका ज्ञान व्यावहारिक निरीक्षण और गणनामात्र तक है जबकि स्थिर नक्षत्रों के विषय में उन्हें कोई जानकारी नहीं''।

किन्तु जहाँ वह हिन्दुओं की आलोचना करता है वहीं वह अरब वासियों के नक्षत्र ज्ञान की आलोचना करने सें भी संकोच नहीं करता। अरब वासियों की नक्षत्र गणना एवं निरीक्षण सम्बन्धी ज्ञान के विषय में वह कहता है 'अरबवासी अशिक्षित लोग हैं, जो न लिख सकते है, न गणना कर सकते है। वे केवल संख्याओं और नेत्रदृष्टि पर विश्वास करते हैं। नेत्रदृष्टि के अतिरिक्त उनके पास अनुसंधान का और कोई माध्यम नहीं। वे नक्षत्रों और उनमें स्थिर तारों का अनुमान करने में अयोग्य है''।

विषय वर्णन की पद्धति : तुलना और विवेचना

अलबीरूनी ने 'तहकीक–ए–हिन्द' में विषय–वर्णन के क्रम में भारतीय उद्धरणों के साथ–साथ, इस्लामी, ईसाई और यूनानी ग्रन्थों के उदाहरण भी दिये हैं। कई स्थानों पर उसने उस विषय से सम्बन्धित अपनी विवेचना भी प्रस्तुत की है। वह लिखता है ''मैं एक जाति के सिद्धान्तों की तुलना दूसरी जाति के सिद्धान्तों के साथ केवल इसीलिए करना चाहता हूँ कि उनका आपस में निकट सम्बन्ध है''।

विषय–प्रसंग में उसने यथा सम्भव आलोचना भी की है। वह कहता है ''मैंनें अपनी रचना में अधिकांश स्थलों पर बिना विवेचना के, जब तक कि ऐसा करने का कोई विशेष कारण न रहा हो, साधारण रूप से वर्णित किया है''। अलबीरूनी ने संस्कृत शब्दों को वर्णन के साथ प्रायः एक बार यथास्थान दिया है, साथ में उसके अर्थ भी। वह लिखता है ''मैंने संस्कृत नामों और वैज्ञानिक परिभाषाओं को, प्रसंगवश जहाँ–जहाँ आवश्यकता पड़ी है, एक ही बार लिख दिया है''।

अलबीरूनी ने विषय की बोधगम्यता और स्पष्टता को प्रदर्शित करने के उद्देश्य से अन्य देशों के विषयगत सिद्धान्तों को भी गृहीत किया। अतः उसने भारतीय उद्धरणों के साथ–साथ

यूनानी, ईसाई और इस्लामी साहित्य के उद्धरण भी दिये। वह लिखता है ''मैं पाठकों के सम्मुख हिन्दुओं के सिद्धान्त उनके वास्तविक रूप में रख दूँगा, साथ ही यूनानियों के वैसे ही सिद्धान्त उनके पारस्परिक सम्बन्धों को दर्शाने हेतु देता जाऊँगा''। इसके अनन्तर वह लिखता है: ''यूनानी विचारों के अतिरिक्त मैं यदा–कदा सूफियों और ईसाइयों के किसी एक पंथ के विचारों का भी उल्लेख करूँगा''।

वैज्ञानिक शैली

विषय–वर्णन में अलबीरूनी ने वैज्ञानिक शैली का समर्थन किया है। वैज्ञानिक शैली से यही तात्पर्य है कि विषय का प्रतिपादन पूर्णतः सत्य पर आधारित हो। अलबीरूनी लिखता है ''यदि ग्रन्थकर्ता विशुद्ध वैज्ञानिक शैली की आवश्यकताओं का अनुभव नहीं करता तो वह कुछ छिछली सूचनाएं ग्रहण कर लेगा, जो न उस सिद्धान्त के अनुयायियों को ही सन्तुष्ट करेगी और न उन्हें, जो वस्तुतः यह जानते हैं। ऐसी स्थिति में अगर वह ईमानदार चरित्र है तो वह उसे वापस लेगा और लज्जित होगा, लेकिन अगर वह इतना निकृष्ट हो कि सत्य को सम्मान न देता हो तो वह स्वयं अपनी भूल पर झगड़ने लग जाएगा''।

वैज्ञानिक शैली की इसी पद्धति का अनुसरण करते हुए ही अलबीरूनी ने अपना ग्रन्थ 'तहकीक–ए–हिन्द' लिपिबद्ध किया। उसने हिन्दुओं के गणित और नक्षत्रों सम्बन्धी ज्ञान की तुलना कंकरों में मिले हुए रत्नों से की है। वह कहता है '' जहां तक मैं उनके गणित तथा ज्योतिष साहित्य को जानता हूँ, उनकी समता मैं सड़ी हुई खजूरों में मोतियों अथवा कंकरों में पड़े हुए बहुमूल्य रत्नों से कर सकता हूँ। दोनों तरह के पदार्थ उनकी दृष्टि में एक हैं, वे अपने को उठा नहीं सकते, जब तक विशुद्ध वैज्ञानिक शैली नहीं अपनाएगें''।

अलबीरूनी की चारित्रिक विशेषता

प्रकृति से अध्ययनशील और मस्तिष्क से विचारशील होने के कारण तथा किसी देश, धर्म, जाति, दिशा और संस्कृति से व्यक्तिगत विरोध–भाव न होने के कारण अलबीरूनी के चरित्र में अनेक विशेषताएं थी। ये विशेषताएं उसके दृढ़ विश्वास और निर्मल चरित्र की परिचायक थी, जिनके आधार पर उसने अपने ग्रन्थ की रचना की। विषय का विश्लेषण और निर्णय देने में वह इतना उत्साही था कि उसने प्रत्येक गम्भीर और वांछित विषय पर अपने विचार अवश्य प्रकट किए हैं। यद्यपि उसकी कई विवेचनाएँ पूर्वाग्रहों और व्यक्तिगत स्थिरताओं से प्रेरित हैं, किन्तु उसका यह प्रयास निश्चय ही प्रशंसनीय है।

उसके चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह असत्य का घोर विरोधी और सत्य का प्रबल समर्थक था। वह लिखता है ''असत्य से दूर रहने वाला और सदा सत्य का अनुसरण करने वाला व्यक्ति ही प्रशंसनीय है''। अपने कथन के समर्थन में वह कुरान का साक्ष्य देता है ''सत्य बोलो, चाहे वह तुम्हारे अपने ही विरूद्ध क्यों न हो''। सत्य बोलने के लिए नैतिक साहस चाहिए, जो प्रत्येक व्यक्ति में नहीं हो सकता। अलबीरूनी इस प्रसंग मे यीशु के इस उपदेश को उद्धृत करता है 'सम्राटों के सामने सच बोलने में उनके क्रोध से मत डरो। चाहे उनका तुम्हारे शरीर पर अधिकार हो, किन्तु वे आपकी आत्मा का कुछ नहीं कर सकते''। इसी सत्य के अनुसरण को अलबीरूनी ने नैतिक साहस की संज्ञा दी है।

अलबीरूनी राज्य और समाज के बीच ऐसी ही स्वार्थहीन कड़ी का पक्षधर था जिसमें दृढ़ विश्वास और कर्म की अपूर्व क्षमता हो। उसके अनुसार वस्तुतः वही व्यक्ति शासनसूत्र का संचालक हो जिसमें कर्म के प्रति दृढ़ता और आकस्मिक विपत्ति के समय संकल्प की क्षमता हो। यदि ऐसा व्यक्ति सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन में नवीन क्रम संचालित करता है तो उसका आदेश सभी स्वीकार करेंगे, जो परम्परा के रूप में आगे तक चलता रहेगा। शासन और समाज की इस नूतन अभिव्यक्ति का आधार यदि धर्मभावना हो तो दोनों में एकत्व हो जाता है और यही एकत्व मानव–समाज की श्रेष्ठतम उपलब्धि को दर्शाता है। वह लिखता है ''उनकी एकता मनुष्य समाज के सबसे ऊँचे विकास का प्रतिनिधित्व करती है, सभी व्यक्ति आसानी से आकांक्षा कर सकते हैं''।

शासन के दूसरे दार्शनिक पक्ष पर विचार करते हुए वह बाइबल के इस मत को उद्धृत करता है: ''अगर किसी ने तुम्हारे एक गाल पर थप्पड़ मारा है तो उसके सामने दूसरा गाल भी कर दो, अपने शत्रु को आर्शीवाद दो और प्रार्थना करो। मेरे प्राणों की शपथ, यह एक सर्वश्रेष्ठ दर्शन है, किन्तु इस संसार के सभी लोग दार्शनिक नहीं है। उनमें से बहुत से लोग अज्ञानी और अनजान हैं, जिन्हें तलवार और कोड़े के बिना सही रास्ते पर नहीं लाया जा सकता। वास्तव में, जब से विजेता कांन्सटनटाईन ईसाई हुआ, तलवार और कोड़ा इस्तेमाल हुआ, क्योंकि इनके बिना शासन करना असम्भव होता है''। व्यक्तिगत रूप से अलबीरूनी व्यवहारिक पक्ष पर अधिक ध्यान देता था। अकर्मण्यता का जीवन और अत्याचार सहन करने का साहस, वह इन दोनों का विरोधी था चाहे वह कुछ लोगों के लिए तलवार और कोड़ा प्रयोग करने के व्यवहार का समर्थन करता था।

अलबीरूनी को जिन विषयों का ज्ञान नहीं था, उसका वर्णन करते हुए वह सरल एवं स्पष्ट शब्दों में अपनी असमर्थता प्रकट करता है, क्षमा प्रार्थना करता है। वह अपने ज्ञात ज्ञान को निसंकोच पाठकों के सम्मुख रख देता है। ग्रहों के विषय में लिखते हुए वह कहता है ''ग्रहों के अन्तरों की परिसंख्यन की हिन्दू–प्रणाली, जिसे मैंने ऊपर उद्धृत किया है, ऐसे सिद्धान्त पर निर्भर है, जो मेरे ज्ञान और वर्तमान स्थिति में, जब तक मुझे हिन्दुओं के ग्रंथों का अनुवाद करने की कोई सुविधा नहीं, मुझे अविदित है''।

हिन्दुओं की सूचनाओं की आलोचना करते हुए वह अपनी त्रुटियों के लिए क्षमा मांगता है। वह लिखता है: ''हिन्दुओं के वृत्तान्तों को किसी सीमा तक अत्यधिक परिश्रम और सावधानी से शुद्ध किया जा सकता हैं, इस प्रकार जो कुछ हम नहीं जानते हैं, उसके कारण हम जो कुछ जानते हैं, अपने मस्तिष्क को दबाने के लिए नहीं बना सकते थे। जहाँ कहीं भी त्रुटियों हों, हम उसके लिए क्षमा मांगते हैं''।

अलबीरूनी ने उन लोगों की निन्दा की है, जो अन्यायपूर्वक किसी पर आक्षेप अथवा अशिष्टता प्रकट करते हैं। एक स्थान पर वह ब्रह्मगुप्त को आर्यभट्ट के साथ उच्छृंखल व्यवहार करने का दोषी ठहराता है। इतना ही नहीं, जहाँ भी उसे किसी लेखक का विवरण कुछ भ्रमपूर्ण और असत्य लगता है, वहाँ वह अपनी सत्यनिष्ठ प्रकृतिवश तथाकथित लेखक की आलोचना करने से भी परहेज नहीं किया। वराहमिहिर के किसी विवरण से प्रसन्न होकर, जहाँ उसकी प्रशंसा में उसने 'सत्यवक्ता और सत्य–आधार पर खड़ा रहनेवाला' घोषित किया, वहीं एक स्थान

पर उसके किसी गलत विवरण से चिढ़कर उसने उसे 'विक्षिप्त का प्रलाप' करने वाला भी कहा है।

अलबीरूनी के व्यक्तित्व का सबसे बड़ा गुण यह था कि उसने अपनी कृति तहकीक–ए–हिन्द में अन्यायपूर्ण, मिथ्या, असत्यपूर्ण, स्वार्थपूर्ण और आग्रहयुक्त विवरणों की निःसकोंच आलोचना की है। यही कारण है कि उसने स्थान–स्थान पर ऐसे विवरणों की निन्दा की है, जो उसके तर्क और विवेक पर खरे नहीं उतरते। उसने हिन्दुओं द्वारा सोना बनाने, वृद्धों को युवक बनाने तथा स्त्रियों के साथ सम्भोग की नैमित्तिक क्रिया एवं रासायनिक विद्या की कड़ी आलोचना की है। हिन्दुओं द्वारा स्वर्ण–निर्माण–विधि का उल्लेख करते हुए वह लिखता है ''अज्ञानी हिन्दू राजाओं द्वारा सोना बनाने के लोभ की कोई सीमा नहीं। अगर उनमें से कोई सोना बनाने की योजना को कार्यान्वित करना चाहता था और लोग उसे अनेक छोटे सुन्दर बच्चों की हत्या की सलाह देते थे तो वह राक्षस ऐसा अपराध करने से भी नहीं चूकता, वह उन्हें आग में फेंक देता''। वह अत्यन्त दुख के साथ यह आशा करता है ''यह बहुत अच्छा होता, अगर इस बहुमूल्य रसायन विज्ञान को विश्व की अन्तिम सीमा पर निष्कासित कर दिया जाता, जहाँ से यह किसी के लिए भी अप्राप्य रहे''। उसके इस कथन से उसके चरित्र का उज्ज्वल पक्ष दर्शाई देता है। वह अपने ज्ञान को अन्तिम नहीं मानता। वह अपने उन विवरणों के लिए ईश्वर से क्षमा–याचना करता है, जो सत्यता नहीं दर्शाते। अपने ग्रंथ के अन्त में वह लिखता है ''हम ईश्वर से, उन विवरणों के लिए क्षमा मांगते हैं, जो सत्य नहीं है''।

संक्षेप में, अलबीरूनी की लेखन पद्धति अन्य समकालीन लेखकों की अपेक्षा सत्य पर आधारित एवं वैज्ञानिक कही जा सकती हैं।

संदर्भ

1. इलियट एण्ड डाऊसन, हिस्ट्री ऑफ इण्डिया एज टोल्ड बॉय इट्स ऑन हिस्टोरियन्स, लन्दन, खण्ड दो, 1877, पुर्नमुद्रित लो प्राईज पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2001, पृ. 1

2. अलबीरूनी, अलबीरूनीज इण्डिया, अंग्रेजी अनुवाद (सम्पा.), एडवर्ड सी. सखाऊ, लंदन, 1910, पुर्नमुद्रित, लो प्राईज पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2003, प्रस्तावना, पृ. 8

3. एफ. स्टेंग्स, पर्शियन–इंग्लिश डिक्शनरी, पृ. 219

4. इलियट एण्ड डाऊसन, पूर्वोक्त, खण्ड दो, पृ. 2

5. अलबीरूनीज इण्डिया, खण्ड एक, पृ. 1

6. वही, खण्ड दो, पृ. 129

7. वही, खण्ड एक, पृ. 1–2

8. वही

9. अलबीरूनीज इण्डिया, खण्ड एक, पृ. 127

10. वही, पृ. 130

11. वही, पृ. 131

12. वही,

13. वही

14. वही, पृ. 132

15. वही, पृ. 133

16. वही, पृ. 135

17. मौलाना सैयद सुलेमान नदवी, अरब और भारत के सम्बन्ध, हिन्दुस्तानी एकादमी, इलाहाबाद, 1930, पृ. 112–13

18. वही

19. अलबीरूनीज इण्डिया, खण्ड दो, पृ. 310

20. वही, पृ. 311–12

21. वही

22. वही, खण्ड एक, पृ. 162

23. वही, पृ. 22

24. वही, पृ. 23

25. वही, पृ. 19

26. राजतंरगिणी, 7.28–29, 1149

27. इलियट एण्ड डाऊसन, पूर्वोक्त, खण्ड एक, पृ. 163–64

28. ए. के. मजूमदार, दी चालुक्य ऑफ गुजरात, भारतीय विद्या सीरीज, खण्ड प्ट, पृ. 331

29. अलबीरूनीज इण्डिया, खण्ड एक, पृ. 22–23

30. वही, पृ. 23

31. वही, खण्ड दो पृ. 10–11

32. अलबीरूनीज इण्डिया, खण्ड एक, पृ. 25

33. वही, पृ. 152

34. वही, खण्ड दो, पृ. 86

35. वही, खण्ड एक, पृ. 81

36. वही, खण्ड एक, पृ. 24

37. वही, पृ. 25

38. वही, पृ. 26

39. अलबीरूनीज इण्डिया, खण्ड एक, पृ. 7

40. वही, पृ. 8

41. वही, पृ. 6

42. वही, पृ. 25

43. वही, पृ. 4

44. वही, खण्ड एक, पृ. 4

45. वही, पृ. 4–5

46. वही, पृ. 99

47. वही, खण्ड दो, पृ. 161

48. वही, खण्ड एक, पृ. 70

49. वही, खण्ड एक, पृ. 200

50. वही, पृ. 376

51. वही, खण्ड दो, पृ. 112

52. वही, पृ. 117

53. वही, खण्ड एक, पृ. 193

54. वही

55. वही, खण्ड दो, पृ. 246